

पाठ-सूची

पूर्वार्ध

गद्य भाग

विषय	पृष्ठ
१—विद्या की महिमा	१
२—गुरुजी की आज्ञा का पालन	३
३—उद्योग	४
४—परिश्रम	६
५—दया	८
६—शत्रु के धोखे में न आना	१०
७—सच्चनता का धर्तवि	११
८—सत्यभाषण	१२
९—परोपकार	१५
१०—महादेव गोविन्द रानाडे	१७
११—पिता की आज्ञा का पालन (१)	१८
१२— (२)	२२
१३—निर्भय	२४

पद्यभाग

विषय

१—कदोरे की मारने
२—
३—कालीन की शोहे
४—कम और मन्नाले
५—विदुरनाति
६—विषय की शोहे
७—रामचन्द्र का गेह मेमना
८—हृन्दिनोद सतलई
९—
१०—
११—
१२—

उत्तरार्ध

पद्यभाग

१—बन्धुवाई का नादन
२—लकड़ और नाथु
३—रक्त वस्त्रों का हलुनन खिन्ने-बिन्ने
४—कम हृन्दिनोद सतलई
५—
६—

बालविनोद

बोया भाग

पूर्वार्ध

गद्यभाग

१-विद्या की महिमा

एक दिन एक लड़का अपनी माता की बातें सुनकर
हुल्ला मचा रहा था। सोचते-सोचते लड़के ने कहा—
“माता, जिन सोचों में मैं हूँ, लड़कों ने कहा—“मैं मनवान
होने का उपाय सोच रहा हूँ।” माता ने कहा—“तुमलोगें मनो
होने का उपाय कहीं से मंगो ?” लड़के ने कहा—“मैं मनो
देखता हूँ” वहीं मनवान मनवान की प्रवृत्ति होती है ..
माता ने कहा—“तुम कौनसे लड़के हो ?”
लड़के ने कहा—“मैं लड़का हूँ।”
माता ने कहा—“तुम कौनसे लड़के हो ?”
लड़के ने कहा—“मैं लड़का हूँ।”
माता ने कहा—“तुम कौनसे लड़के हो ?”
लड़के ने कहा—“मैं लड़का हूँ।”

२—गुरुजी की आज्ञा का पालन

एक गुरुजी अपने घर पर बहुत से विद्यार्थियों को पढ़ाया करते थे । उनमें आरति नाम का एक विद्यार्थी गुरुजी के ही यहाँ रहता और वहीं पढ़ा करता था । गुरुजी अपने विद्यार्थियों से बड़े परिश्रम के कार्य कराया करते थे । ऐसा वे इसलिए करते थे कि जिसमें विद्यार्थियों को बचपन से ही परिश्रम करने का अभ्यास हो जाय ।

एक दिन गुरुजी ने आरति को एक रस्ते को मेंट बाँधने की आज्ञा दी । गुरुजी की आज्ञा पाने ही आरति भट उठ कर रस्ते को चल दिया । वहाँ पहुँच कर वह धान के रस्ते को मेंट बाँधने लगा । उसने बड़े परिश्रम से चारों ओर को मेंटें तो बांध दीं । परन्तु एक जगह थोड़ी सी मेंट उससे न बँध सकी । उस देशार ने कटे धार मेंट बनाई, परन्तु पानी का वेग वहाँ इतना अधिक था कि वह जब बनाता तभी पानी मेंट को काट देता । अन्त में जब उसने देखा कि यह मेंट मर बांधे न बँध सकेंगी तब वह आप ही वहाँ नोट गया जहाँ से पानी बाहर निकलता था । उसके नोट जाने से राती निकलना बन्द हो गया । वह कह बोट इसी प्रकार पानी गले पड़ा रहा ।

जब मायकल हूँ तब गुरुजी ने आरति को न दस मर और बिना दस मर नोट के असाह कराने का 'बद-
'दय' न कर के दोन कुँडल दूध नोट के असाह कहा है।"

ज्ञाता है । उद्योग के बिना किसी का कुछ भी नहीं मिल सकता ।

मनुष्यों की बात जानने दोलिए: छोटे छोटे कीड़ों तक को न काम करते देखते हैं । शहद की मक्खी को देखिए, वह तना छोटा जीव है । उन मक्खियों में से कुछ पुष्पों का रस न कर लाती हैं, कुछ रहने के लिए छत्ता लगाती हैं और कुछ दूध तैयार करती हैं । सारांश यह कि शहद की मक्खियों में कुछ न कुछ उद्योग अवश्य करती ही रहती हैं ।

बड़े दुःख की बात है कि छोटे छोटे कीड़े मकोड़े तो रात दिन उद्योग में लगे रहे और मनुष्य चुपचाप हाथ पर हाथ रख बैठे रहे । सुस्त बैठने के लिए मनुष्य नहीं बनाया गया । वह काम और उद्योग करने के ही लिए बनाया गया है । प्रालम्भ में पड़े रहने और उद्योग न करने से मनुष्य का कोई काम नहीं बन सकता ।

पर मैं अनेक प्रकार के खाने पीने के पदार्थ रखें हों, सामने औषधों का ढेर लग रहा हो, परन्तु उनके देखने से ही न तो किसी की भूख दूर होगी और न रोग शान्त होगा । भूख और रोग के दूर करने के लिए उनका उचित रीति से खाना पीना चाहिए । खाना पीना भी एक प्रकार का काम है । काम के लिए भी उद्योग की आवश्यकता है । अतएव कार्य-साधक के लिए मनुष्य को उद्योग करना चाहिए ।

वे दिनकुल निराला हो गये और अपने जी में कहने लग कि मेरी बुद्धि बड़ी मोटी है, या व्याकरण की विद्या मुझ कभी न आयेगी, इसलिए हमने परितन करना छोड़ दिया है। इनके सामने तो यह कर पूरे व्याकरण विद्वान् बन गये, पर वे कोरे के कोरे ही रहे।

एक दिन सुनली ने दोस्तद्वय को खूब पोंछा। उसी दिन वे पढ़ना थिरगता गये और छाह छाह कर वे घर से भाग गये और कुछ दिन इधर उधर मारे मारे फिरते रहे।

दोस्तद्वय घूमते फिरते एक दिन किसी मजेवा क पाठ पर आ गिरे थे। वह पाठ पाठ्य क होता हुआ था। वे बैठे ही थे कि एक बड़े पटा सेबर पाठ पर कोई और पढ़ पाठ पर गलत कर मजा करने लगे। मजा कर चुकने पर वह पढ़े की पाली में भर कर ऊपरने धर की खोजे गये।

जिन मजा पर वह पढ़ खोजा था वह बहुत पला हुआ था। बावजूद यह था कि उसी दिन हमने मजा पर पढ़ खोजा था और जिस पर वे पाठ्य से पढ़ा न पहुँचा पर मजा था और जो हम का दोस्तद्वय करत कर ने विचार था। मजा 'वे कर पाठ्य से' कहा और 'मजा' के पर की मजा से पला मजा है कर कर लोकर बनने से मजा मजा हुई मजा से ही मजा

वे विचार के पाठ्य पर न मजा वह पढ़े की मजा से मजा से

पढ़ कर संसार में और कोई अच्छा काम नहीं । मनुष्य को उचित है कि जहाँ तक हो सके दूसरों का कष्ट दूर करने का प्रयत्न करे ।

सब दिन एक से नहीं रहते । आज जो नव प्रकार से सुख चैन में है, न जाने कल उस पर क्या विपत्ति आ पड़े । आपत्ति में यदि कोई किसी को वचनों से भी सहायता करता है तो इतने ही से उसे बहुत कुछ सहारा मिल जाता है ।

गाय, बैल आदि पशु अपना सुख दुःख किसी से कह नहीं सकते । इस कारण उन्हें कभी कष्ट न पहुँचाना चाहिए । किसी पंगु, मूले, अंधे और रोगी को देख कर उसकी हँसी न उड़ानी चाहिए । तुम्हारी सहायता से उनका बहुत कुछ भला हो सकता है ।

एक दिन काशी में एक लँगड़ा साधु मार्ग में पड़ा था । माघ का महीना था । बड़ा जाड़ा पड़ रहा था । मारे जाड़े के वह ठिठुर रहा था । उसी समय दयाशङ्कर नामक एक लड़का उसी मार्ग से जा रहा था । दयाशङ्कर को उस लँगड़े साधु पर दया आ गई । वह उसका कष्ट और न देख सका । दयाशङ्कर ने दया करके अपना कपड़ा उतार कर उसे ओढ़ने के लिए दे दिया ।

जब दयाशङ्कर अपने घर गया तब उसने कपड़ा दे देने का सब स्तुति अपने पिता को सुना दिया । उसका पिता उसका बड़ा काम न बड़ा समझ हुआ । उसने उसका बड़ा प्यार



भागने लगी। सुर्गे ने कहा—“क्यों, क्यों, कहाँ चली ? भय तो कोई भय की बात नहीं है।” लानही ने कहा—“यह तो सब है, परन्तु कहीं इन कुत्तों ने भी तुन्दारी तरह दिँदोरा न सुना हो।”

७-सज्जनता का वर्ताव

अच्छे पुरुष उसके साथ अच्छी तरह वर्ताव किया करते हैं। वे सदा ऐसे ही बचन बोला करते हैं जिससे सबका चित्त प्रसन्न हो। भले पुरुष जब किसी से मिलते हैं तब उसका कुशल-समाचार पूछते हैं और सबका आदर-सत्कार करते हैं। इसी को सज्जनता का वर्ताव कहते हैं।

जिन मनुष्य की बाढ़ी में नम्रता और मोठापन नहीं उसके साथ मिलने को किसी का मन नहीं चाहता। सब कोई उससे बचते ही रहते हैं। ऐसा मनुष्य शीघ्र ही संसार में बुराई का घर बन जाता है।

नमस्कार और प्रदान करके कुशल पूछने और अपनी मोठी बाढ़ी से दूसरे को प्रसन्न करने में गाँठ काँ एक कौड़ी भी नहीं लगती। परन्तु ऐसा करने से लाभ बहुत होता है। इसी लिए सत्पुरुष दूसरों के साथ सदा सज्जनता का वर्ताव किया करते हैं।

जा कोई अपने घर भ. व. दमक साथ सज्जनता का वर्ताव

करना चाहिए। जो मिलन योग्य हों उनमें न मिलना और उनके साथ दुर्जनता का व्यवहार करना उचित नहीं। ऐसा करनेवालों की गिनती मजाना में नहीं हो सकती। जिसमें मज्जनता नहीं वह मजान कदापि नहीं हो सकता।

ममता का बर्ताव मान्यता के लिए उसमें मनुष्यों की
समिति करने चाहिए। अथ पुरुषों में मिल कर उनकी मम-
ता के बर्ताव का ज्ञान में इच्छा चाहिए।

मार्जन पुरुषों का पहला पहचान यह है कि वे दूसरों की प्रतिष्ठा का ध्यान रखता करते हैं। वे ध्यान में रखते हैं कि क्या किया करना है और किसी से एक साथ व्यवहार भी करना हो जाय तो वे इसका जमा कर देते हैं।

आ विद्यायां सम्पन्नता का वनों व जल है जलको सभी पान्य है । व महा सुखा रहत है धीर जहाँ की प्रतिष्ठा होतो है ।

== अङ्ग भाष्यम् ==

मन्द मे कइ कर मोगन में कोठे पदमें मरी । मग के
 मकर मे मलय मारी में मारी मगदारी को भी पार का
 उर है । मन्द को मरेकहि मलय की मोगन में कहे मरिगा
 दान है । मलय को मरिग है कि कहे मरिग ही मारी
 मकर को म का उर पदम मन्द को दान में म मरे है ।

लटकों, तुम नदी सत्य बोला करो। भूल से भी कभी झूठ बात तुम से न निकाला करो। झूठ बोलोगे तो लोगों को दृष्टि में गिर जाओगे और फिर तुम्हारा विश्वास जाता रहेगा। यदि फिर सत्य बात भी कहो तो कोई तुम्हारा विश्वास न करेगा। देखो, मैं तुम्हें एक सत्य बोलनेवाले लटकों का पुरस्कार सुनाता हूँ। तब उसे ध्यान देकर सुनो।

एक बार बहुत से सुनलमान पण्दाद गहर की जा रहे थे। पत्तों पत्तों वे एक जङ्गल में पहुँचे। सायंकाल हो गया था और पत्नी यों पटी दूर। आढ़ा ऐसे कड़ाके का पड़ रहा था कि नदके छाय पाँव ऐसे जलते थे। वे लोग उस जङ्गल में जाहो रहे थे कि इनमें से बहुत से हाकू उन पर दृढ़ पड़े। इनका नारा नाम पण्दाद हाकूओं ने छान लिया।

उन्हीं साधियों ने एक छोटा सा मट्ठा भी पा। उस
टाकूमो ने उनके पास कुछ न पाया उस वे उनकी बड़टे टंडोलन
मारे। समस्त मित्र भी हुए उनकी हाथ न लगा। उस एक हाथ
न मट्ठे ने पूछा—“क्या तेरे पास कुछ नहीं है ?” मट्ठा का
साथपाती, उसने भट्ट भट्ट दिया—“है हाँ।”

[illegible]

मोहेंग ।” उनके साथ सब साथी हाकुओं ने भी प्रतिज्ञा कर ली कि अब हम किसी को कष्ट न देंगे । उन्होंने अपने सरदार से कहा—“जैसे आज तक आप बुराई में हमारे सरदार रहे वैसे ही अब भलाई में भी हमारे सरदार रहिए ।”

उन हाकुओं ने सारा माल यात्रियों को लूटा दिया और वे उसी समय से सुमार्ग पर चलने लगे ।

उस लड़के का नाम अब्दुलकादिर था । वह लड़का ईरान का एक बहुत बड़ा नामी साधु हो गया है ।

६—परोपकार

किसी राजा की सेना का एक सिपाही बड़ा बल्लो और चतुर था । राजा उसको बड़ा प्रविष्टा करता था । राजा को सत पर इतना विश्वास था कि उसने सारा काम उसी पर छोड़ रक्खा था । राजा जो काम करता सब उसी की सम्मति से ।

कुछ दिन तक तो वह निराही राज्य के प्रत्येक काम में मन मन से उद्योग करता रहा । परन्तु अन्त में उसके मन में यह आया कि राजा को राजगद्दी से उतार कर आप ही राज बन बैठे । इसा इच्छा का पूरा करने के लिये वह धीरे धीरे कुछ रूप में व्यवस्था करने का

यह व्यवस्था का नाम अब राजा का नाम चुन कर दिया । राजा

इस कारण मैंने चाहा कि कोई ऐसा दन्धन होना चाहिए जिसमें उसका सारा शरीर ढँध जाय और वह दन्धन किसी के काटे न कट सके । बहुत कुछ सोच विचार के अनन्तर, उपकार या भलाई से अधिक और कोई दन्धन मेरी समझ में नहीं आया । कारण यह कि उपकार का दन्धन मन पर होता है और मन सारे शरीर का राजा है । जब मन दन्धन में डाल दिया गया तब उसके हाथ, पाँव आदि सारे अनुचर भी दन्धन में हो जाते हैं । उपकार के दन्धन से ढँध कर उपकार करने-वाले को कभी कोई हानि नहीं पहुँचा सकता ।”

१०—महादेव गोविन्द रानाडे

विद्यार्थियों, मैं जानता हूँ, तुममें से कोई ही ऐसा होगा जिसमें बंबई नगर का नाम न सुना हो । समुद्र के तट पर यह एक बहुत ही विराल नगर है । बंबई का ज्ञान, जो तुम खाते हो, पहले पहल इसी नगर से लाया गया था । बिलायत की बहुत सी वस्तुएँ इसी नगर से यहाँ आती हैं । बंबई के समीप ही एक पूना नामक नगर है । यहाँ के एक महापुरुष का इत्तान्त सुनो । पहले यह उचित होगा कि उस महापुरुष का नाम बतला दिया जाय ।

उनका नाम महादेव गोविन्द रानाडे था । बचपन में वे यह दुर्घटना मना गूँगे की तरह चुपचाप बैठे रहा करते

सादा देख कर और यही समझ कर कि कोई साधारण अनुग्रह होगा, उनसे कहने लगे—“भैया, तनिक मेरे बॉम्ब को हाथ लगा दो” । यह सुनते ही उन्होंने बॉम्ब उठा कर बुढ़िया के लिए पर रख दिया ।

देखा, वे कैसे सज्जन थे । यदि और कोई इतने बड़े पद पर होता तो घरवां पर पांव भी न रखता, बॉम्ब उठाना तो बल्लग रहा, उन बेचारी दान बुढ़िया को और आँख उठा कर देखता भी नहीं । यदि रानाड़े महाशय में ऐसे ऐसे सद्गुण न होते तो आज उनकी इतनी प्रविष्टा कैसे होती ।

११—पिता की आज्ञा का पालन

भला ऐसा कौन होगा जो श्रीरामचन्द्रजी को कया न जानता हो । ये अपने पिता की आज्ञा से, अयोध्या की राजगद्दी अपने भाई भरत के लिए त्याग कर, चौदह वर्ष तक वन में रहे । यह बात बहुत पुरानी है । अभी कुछ दिन हुए, एक राजकुमार ने ठीक ऐसा ही काम कर दिखाया । यह किन्तु आज्ञा के बात है कि यह भी श्रीरामचन्द्रजी का ही वंश है । इसका अन्तर्गत मन

महादेव के महा शक्ति के दो पुत्र थे एक का नाम रामचन्द्र था और दूसरे का नाम शिव । ये दोनों ब्रह्म के पुत्र थे । रामचन्द्र शिव से कुछ बड़े थे जब रामचन्द्र का नाम

मादा देख कर और यही मनन कर कि कोई नायारूप मनुष्य होगा, उनसे कहने लगे—“भैया, तनिक मेरे धोम को हाथ लगा दो” । यह सुनते ही उन्होंने धोम उठा कर बुढ़िया के तिर पर रख दिया ।

देखा, वे कैसे मज्जन थे । यदि और कोई इतने बड़े पद पर होता तो धरती पर पांव भी न रखता, धोम उठाना तो झग रहा, उन बेचारां दीन बुढ़िया की और आँख उठा कर देखता भी नहीं । यदि रानाडे महाशय ने ऐसे ऐसे सद्गुरु न होते तो आज उनकी इतनी प्रतिष्ठा कैसे होती ।

११—पिता की आज्ञा का पालन

भला ऐसा कौन होगा जो श्रीरामचन्द्रजी को क्या न जानता हो । ये अपने पिता की आज्ञा से, अयोध्या को राजगद्दी अपने भाई भरत के लिए त्याग कर, चौदह वर्ष वन में रहे । यह बात बहुत पुरानी है । अभी कुछ दिन हुए, एक राजकुमार ने ठीक ऐसा ही काम कर दिखाया । यह कितने आश्चर्य की बात है कि यह भी श्रीरामचन्द्रजी का ही वंशज था । इनका वृत्तान्त सुनो ।

मेवाड़ के राधा राजभिह के दो पुत्र थे । एक का नाम रामचन्द्र था और दूसरे का जयभिह । ये दोनों बच्चे थे रामचन्द्र जयभिह न कुछ धर्म पूरे करना था इन

[illegible]

उस लड़के का नाम वीरेश्वर मुकर्जी था । वह बन्नु जिला स्कूल की एंट्रेंस कक्षा में पढ़ता था ।

१४—नासिरुद्दीन महमूद (१)

बादशाह नासिरुद्दीन का जीवन-वृत्तान्त पढ़ने से हम समझ सकते हैं कि जो मनुष्य सभ्य, सज्जन और सीधे सादे होते हैं चाहे वे बादशाह भी हो जायें तो भी उनको अभिमान नहीं होता और वे अपनी मज्जनना को नहीं छोड़ते । सदा सत्कर्म ही करते रहते हैं ।

नासिरुद्दीन महमूद सुलतान अलतमश का पौत्र था । पितामह के मर जाने पर उसके शत्रुओं ने उसे पकड़ लिया । उसके पकड़े जाने पर, देहली में जितने बादशाह हुए, उन्होंने अपनी प्रजा को ऐसा सताया कि वह सबकी सब बिगड़ खड़ी हुई और नासिरुद्दीन को छुड़ा कर उसने अपना बादशाह बना लिया ।

जब नासिरुद्दीन बादशाह बना तब राज्य के कार्यों में उमने बड़ी श्रुतियाँ पाईं । पहले बादशाहों की अमावधानी से यमुना के दक्षिणी भाग का सारा देश और मालवा पठानों के हाथ से निकल गया था । और मुगल सिन्ध नदी के पार उतर कर पठानों के देश पर चढ़ाई करना चाहते थे ।

नासिरुद्दीन ने सबसे पहले यह काम किया कि अपने

नामिच्छतः न गच्छेत् ।

नामिहरान महामुद्र ।
 तस्मै नमः ॥ मन्त्रो मयासुरो न की मयाह सं मुद्रां वी ज्ञानं दत्त
 शोक दिया और जो देना औरों ने दवा लिया था वह
 करके सब लौटा दिया ।

१४-नानिरहीन महमूद (२)

१५—नानिरहीन महमूद (२)

[illegible]

उम लड़के का नाम धीरे-धीरे मुकजी था । वह बन्नु जित्त
स्कूल की एंट्रेंस कक्षा में पढ़ता था ।

१४—नासिरुद्दीन महमूद (?)

बादशाह नासिरुद्दीन का जीवन-वृत्तान्त पढ़ने से हम
समझ सकते हैं कि जो मनुष्य सभ्य, सज्जन और सीधे सादे
होते हैं चाहे वे बादशाह भी हो जायें तो भी उनको अभिमान
नहीं होता और वे अपनी सज्जनता को नहीं छोड़ते । सदा
सत्कर्म ही करते रहते हैं ।

नासिरुद्दीन महमूद सुलतान अलतमश का पौत्र था ।
पितामह के मर जाने पर उसके शत्रुओं ने उसे पकड़ लिया ।
उसके पकड़े जाने पर, देहली में जितने बादशाह हुए, उन्होंने
अपनी प्रजा को ऐसा सताया कि वह सबकी सब थिगड़ खड़ी
हुई और नासिरुद्दीन को छुड़ा कर उसने अपना बादशाह
बना लिया ।

जब नासिरुद्दीन बादशाह बना तब राज्य के कार्यों में
उमने बड़ी थुटियाँ पाईं । पहले बादशाहों की अमावधानी
से यमुना के दक्षिणी भाग का सारा देश और मालवा पठानों
के हाथ से निकल गया था । और मुगल सिन्ध नदी के पार
उतर कर पठानों के देश पर चढ़ाई करना चाहते थे ।

नासिरुद्दीन ने सबसे पहले यह काम किया कि अपने

न्वो गयासुद्दीन की सलाह से मुग़लों को भागे बढ़ने से रोक दिया और जो देश औरों ने दबा लिया था वह युद्ध रके सब लौटा दिया ।



१५—नासिरुद्दीन महमूद (२)

नासिरुद्दीन को विद्या की बड़ी चाह थी । वह विद्वानों का बड़ा सत्कार किया करता था । तरह तरह के ग्रन्थों के पढ़ने में वह रात दिन ऐसा लगा रहता था कि जेलखाने का फट भी उसे कुछ पुराना मालूम होता था । राज-काज से करते रहने पर भी उसने पुस्तकों का देखना-भालना नन्द न किया । उसने भारतवर्ष और ईरान का एक अच्छा विद्वांस तैयार कराया, जिसका नाम उसी के नाम पर “तय-हात नासिरी” रखवा गया ।

नासिरुद्दीन को इस बात का बड़ा ध्यान रहता था कि मेरे कारख किस्मों का चिन्तन न दुरे । एक दिन अपनी बनाई एक पुस्तक उसने अपने एक सरदार को दिखाई । सरदार ने उसमें कई एक अशुद्धियाँ बताईं । सरदार के कथनानुसार नासिरुद्दीन ने बैसा हो बना दिया । परन्तु जब सरदार बला गया तब नासिरुद्दीन ने बैसा हो बना दिया जैसा पहलें था ।

बच्चों ने पूछा “वह क्या बात है ? जो आपने काट दिया था अब फिर वहीं क्या बना दिया ?” नासिरुद्दीन ने

हो है कि मैं तुम्हें निरा निरा कर देबदा और वीलों में अपना
पेट पानटा हूँ । उनकी आनदनी इतनी भी नहीं होती कि हम
तुम अच्छी तरह गा पी नकें । निर भला दाली कहीं से रस
मकदा हूँ ।

रहा फोगा । उसमें मेरा एक पैना भी नहीं । वह तो प्रजा
का है । वनों के सुग और लाम के कानोंमें लगाया जा सकदा
है । यदि मैं आज उनसे से एक पैना भी ले लूँ तो क्या ईश्वर
को क्या उतर देगा । जिन प्रकार हो सके, यह कह सहा,
ईश्वर तुम्हें इसका फल देगा ।”

१६—नवाई जयसिंह

औरंगज़ेब और महाराजा जयसिंह ने किलों काटव बन-
वन हो गई । औरंगज़ेब ने बहुतों काहा कि महाराजा ने बहना
से, पर वे अपनी दुष्टमानी से उनके हाथ न छोड़े । उनके
मरने पर बहना ने उनके लहकें को एकड़वा नीलपा । गज-
ह्वार वनों तक बिदा हो । मंगने में लगे थे और मंगल के
सबहार न जानते थे । अपने मगर उनके मर्द वनों में अपनी
अपनी मजम के अनुसार बहना के वनों के लता लताये । गज-
ह्वार न कहा । जो बहना १ इन्च न एक जो बहना न दूध का
का लता हूँ । लता न न कहा । लता । अपना मजम न
बहना १ न ईश्वर तुम्हें क्या दूँ बहना । लता न कहा

कर बड़े बड़े कट सहवा हुआ देख-विदेख मिलने लगा । उनको बड़े बड़े दया थी । कभी वह नासवा जाता, कभी ग्वालिपर, और कभी किसी सबन बन में जा खिन्ना । बैरानखी का एक सहा निवृत्ति था । अहुतकातिन उसका नाम था । वह ग्वालिपर राज्य का एक बड़ा कर्मचारी था । वह भी इस आपत्काल में बेग बंद कर अपने निवृत्ति के साथ खिन्ना था ।

एक दिन दोनों निवृत्ति एक दूर के गाँव बैठे हुए यह सोच रहे थे कि अब क्या करना चाहिए । इन्हीं में पठानों का एक सरदार कुछ सिपाहियों को साथ लिये हुए आ पहुँचा । उसने आते ही उन दोनों को घेर लिया और कहने लगा—“तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ? कहाँ जाओगे ?”

यह सुन अहुतकातिन ने कहा—“भई, हम यात्री हैं । मक्के शरीफ जाने के लिए गुजरात की ओर जा रहे हैं ।” यह सुन और जन में कुछ सोचकर सरदार ने फिर पूछा—“तुम हो कहाँ के ?” अहुतकातिन बोले जा—“बंगाल के ।”

बैरानखी और अहुतकातिन इन दोनों को आयु बराबर थे । इनका रङ्ग रूप भी ऐसा मिलता जुलता था कि ये दोनों सहोदर भाई प्रतीत होते थे ।

सरदार के मन में कुछ सन्देह पैदा हुआ । उसने अपने भादियों से पूछा—“तुम्हारे में कोई इनका पहचानता है ? मैं समझता हूँ कि ये बंगाल लोगों के गुनवर हैं । इन पर एक



पालने पढ़ते हैं ? ऐसा न कहें तो बूढ़े माँ-बाप को कहां से तिलाँज ? आप अपनी बातें अपने पास रखिए । वस अब भलाई इसी में है, कि जो कुछ तुम्हारे पास हो सब चुपके से रख दो और अपना मार्ग पकड़ो । नहीं तो ऐसा लट्टू मारेंगा कि तिर फट जायगा ।”

रत्नाकर ने ये बातें कहीं तो बड़े क्रोध में, परन्तु साधु तो साधु ही था । उसने उसकी बातों को सुन कर कहा—“मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ । क्या तुम्हारे माता-पिता जानते हैं कि तुम किस प्रकार धन कमा कर लाते हो ?” रत्नाकर ने कहा—“मैं यह कुछ नहीं जानता ।”

साधु ने कहा—“अच्छा एक बार उनसे पूछ तो आओ । देखो तो तुम्हारी यह कमाई उनके पसन्द है या नहीं ? यदि पसन्द हो तो आकर मुझे मार डालना । मैं साधु हूँ, असत्य कभी नहीं बोलता ।”

रत्नाकर ये बातें सुनते ही तिलतिला कर हँस पड़ा और कहने लगा—“बाह ! अच्छे कही ! मैं उधर घर जाऊँ, आप इधर बस्यत हों ! मैं आपकी बातों को खूब समझता हूँ । आप मुझे न तिललाइए, सीधे सीधे देना हो तो दे दो नहीं तो वैसा कहो ।”

२०—उपदेश का फल (३)

साधु ने उसकी बातों को कुछ भी पत्रां न को । उसका

अब तक कुसंगति में पड़ जाने के कारण, अज्ञान से, जो कुछ किया सो किया; परमात्मा से उसके लिए क्षमा माँगो। और रात-दिन उसकी भक्ति किया करो।”

देखो, साधु के उपदेश का रत्नाकर के हृदय पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह बिलकुल सुधर गया। फिर वह परोपकार और पढ़ने लिखने में ही रात दिन लगा रहता था। होते होते उसका यश चारों ओर फैल गया और विद्या भी उसे इतनी अधिक आ गई कि उसने एक बड़ा ग्रन्थ निर्माय किया; जिसका नाम रामायण है। वही रत्नाकर वाल्मीकि के नाम से विख्यात हुआ। वाल्मीकि रामायण इन्हीं ने बनाई थी।

२१—महारानी कुन्ती की सज्जनता (१)

विद्यार्थियो, यदि तुमने दिखो देखो न होगो तो उसका नाम तो अवश्य ही सुना होगा। क्योंकि वह एक बड़ी प्रसिद्ध और प्रार्थान नगरी है। भारतवर्ष के राजा और बादशाह सदा वहीं रहा करते थे।

प्राचीन काल में दिखी के पास ही एक बहुत बड़ा नगर था। उसका नाम हस्तिनापुर था। वहाँ का राजा दुर्योधन अपने पचरे भाई पाँचों पाण्डवों से बड़ी ईर्ष्या रखता था। दुर्योधन के द्वारा कष्ट पाकर पाँचों पाण्डव अपनी माता कुन्ती को साथ लेकर वहाँ से चले गये। वे देश बदल कर एक शहर में एक

अब तक कुसंगति में पड़ जाने के कारण, अज्ञान से, जो कुछ किया तो किया; परमात्मा से उसके लिए क्षमा माँगो। और रात-दिन उसकी भक्ति किया करो।”

देखो, साधु के उपदेश का रत्नाकर के हृदय पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह बिलकुल सुधर गया। फिर वह परोपकार और पढ़ने लिखने में ही रात दिन लगा रहता था। होते होते उसका यश चारों ओर फैल गया और विद्या भी उसे इतनी अधिक आई कि उसने एक बड़ा ग्रन्थ निर्माद किया; जिसका नाम रामायण है। वही रत्नाकर वाल्मीकि के नाम से विख्यात हुआ। वाल्मीकि रामायण इन्हीं ने बनाई थी।

२१—महारानी कुन्ती की सज्जनता (१)

विद्यार्थियो, यदि तुमने दिष्टो देखो न होंगे तो उसका नाम तो अवरुद्ध हो सुना होगा। क्योंकि वह एक बड़ी प्रसिद्ध और प्राचीन नगरी है। भारतवर्ष के राजा और बादशाह सदा यहाँ रहा करते थे।

प्राचीन काल में दिल्ली के पास ही एक बहुत बड़ा नगर था। उसका नाम हस्तिनापुर था। वहाँ का राजा दुर्योधन अपने चचेरे भाई पाँचों पाण्डवों से बड़े ईर्ष्या रखता था। दुर्योधन के द्वारा कुछ पाकर पाँचों पाण्डव अपनी माता कुन्ती के साथ लेकर वहाँ से चले गये। वे वेश बदल कर एक गहर में एक

२२—महारानी कुन्ती की सज्जनता (२)

एक दिन ऐसा हुआ कि भीमसेन तो अपनी माता के पास रह गया और शेष चारों भाई भित्ता लेने चले गये । अकस्मात् ब्राह्मण के घर से रोने पीटने का शब्द सुनाई दिया । रुदन की सुनते ही कुन्ती ने ब्राह्मण के घर जाकर देखा तो ब्राह्मण अलग रो रहा है, ब्राह्मणी अलग सिर पीट रही है और उनके लड़के अलग बिलबिला रहे हैं । कुन्ती ने उनसे रोने का कारण पूछा, परन्तु रोने धोने में कौन किसी की सुनता था ।

जब कुन्ती ने बार बार रोने का कारण पूछने का लिए हठ किया तब ब्राह्मण ने कहा—“भाई क्या पूछती हो क्या बताऊँ ! यह घुरा दिन आज आ ही गया कि या तो मैं स्वयं उस राक्षस के पास जाऊँ और छो-पुत्र को सदा के लिए दुख-सागर में निमग्न छोड़ जाऊँ या इनमें से किसी को भेजूँ ।

हम घर में कुल चार प्राणी ठहरे । बताओ, किसे राक्षस का भोजन बनाऊँ । यदि हममें से किसी एक की भी जान गई तो शेष तीनों तड़प तड़प कर मर जायेंगे । इससे तो यही अच्छा कि हम सब चारों एक साथ उसके पास चले जायें और वह एक साथ हम सबों को खा जाय ।”

ब्राह्मण की बातें सुन कर कुन्ती ने कहा—“यदि इतनी ही बात है तो तुम क्यों रोते हो ? मैं पाँच पुत्र हूँ । मैं उनमें से एक को राक्षस के पास भेज दूँगी ।”

२२—महारानी कुन्ती की सम्मति (२)

[illegible]

वह हृदयों में सर सर रेंगे का करार दूधों का तिर हठ
 तिरा तब प्रकाश वे कहे— "मैंने क्या दूधों को क्या मनाये !
 वह हुरा तिर प्रकाश का हो गया कि हाँ तो मैं स्वयं मत राख
 के मत पाउं मैं तो दूध को मना के तिर दूध-मनार में
 निजक तेंह पाउं का हृदयों में तिरों को अर्थ ।

हम सब में कुछ कर पायें तब । हममें, किसे राख
 का सोच पायें । यदि हममें से किसे एक को भी मर
 में तो रो रोते लड़ लड़ कर कर पायें । हममें से यही
 समझ कि हम सब बने एक एक लहरी पल बने बने
 और वह एक एक हम सबों को लह लह ।

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

को राजसूय के समीप भेजने का नारा पृथान्व कुन्ती ने उनकी कह सुनाया ।

राजसूय के साथ सहने के लिए भीमसेन का झक्रेला हो जाना सुन कर पुबिष्टि की दही पिन्ना हुई, उनके मुख पर उदासी छा गई । वे मन ही मन ईश्वर से अपने भाई का कृपा भगाने लगे । उन्होंने कहा—“भीम की झक्रेला न भेजना चाहिए था ।”

पुबिष्टि की पिन्ना में पड़ा देग कर कुन्ती ने कहा—
पुत्र, तुम पिन्ना न करो । भीम के घर की मैं जानती हूँ कि
कितना है । तुम नहीं जानते । मुझको उनके पराक्रम पर पूरा
भरोसा है । वह अवश्य इस राजसूय को मार कर महुआन
रही झक्रेला ।

परमेश्वर कुन्ती को उचित है कि जो किसी की कह में दरे
को नहीं एक ही सक्ते सबको मर्यादा करे । जो मनुष्य दूसरों
के दुःख में मर्यादा करते हैं, परमेश्वर महा सबको मर्यादा
करता है । तुम दयावाने मत । मैंने ही भीम को भेजा है तो
मर्यादा हीर सबको सबको के सब दयावाने के लिए भेजा है ।

मुझे यह हर विधान है कि परमेश्वर सबको दयावाने महा-
दयावाने । यह राजसूय के जाने जाने से सब मर्यादा-मर्यादा
के सब सब करे ।

यह सब ही ही ही है कि इस में राजसूय को मार
का मर्यादा कीर सब मर्यादा न राजसूय का मार है

हमारे लड़के ने हमका ठोक ठोक मूल्य बतल दिया । भादक ने
 रुपयों से दाम निकाल कर हमको सामने रख दिया ।

लड़का जब कपड़ों की लट्ट बनने लगा तब देखता तो
 कपड़ा एक जगह से कटा हुआ था । यह देख कर हमने भादक
 से कहा—“भार देस लो, कभी कट देना चाहता है, कपड़ा यहाँ
 पर तनिक ग्रा कटा हुआ है । मैं तुमको जताये देता हूँ । पोछे
 से यह न कहना कि लड़के ने मुझे धोखा दे दिया ।”

भादक न देख कर कपड़ा लौटा दिया और हमने दाम
 पर लिये ।

यहाँ पर दुकानदार भी देता हुआ ये बातें सुन रहा
 था । लड़के की बात सुन कर वह बहुत विनम्र । हमने
 तब का लड़के दिया को तुलाया और हमने कहा—

“आपका लड़का बड़ा चालाक और धूर्त है । दुकान-
 दारों के कपड़े का लूट है । वह मात्र देखता नहीं जानता । यह
 बात आपका कह है कि आपने कपड़े लूट कर दाम का लें ।
 आपका यह कहना कि लड़के ने धोखा दे दिया कि लूट हुआ है !”

दुकानदार ने यह सुन कर लजब खिन्ना होकर कहा—
 “यह बात मैं नहीं कह सकता । मैं आपका लड़का
 नहीं जानता । मैं तो बस आपका लड़का ही जानता हूँ ।”

दुकानदार ने कहा—“यह तो बस आपका लड़का ही जानता है ।”

के पार द्वार हो और यह विचार कर लिया कि यमुना को अपने राज्य की सीमा बनाये । यह देख कर उस समय के गवर्नर जनरल सार्जेंट मिनटो ने सर चार्ल्स मैटकाफ को उनके पास भेजा । महाराजा ने मैटकाफ साहब का बड़ा आदर-सत्कार किया और कुछ सोप समझकर अंगरेजों से मेल कर लिया । मन् १८०६ ईसवी में उन्होंने सतलुज के पार से अपनी सेना लौटा ली ।

रत्नोत्तमिंह के पराक्रम के आगे अकूनामिस्तान के पठानों को भी अपना मिर नाँवा करना पड़ा । उन्होंने काबुल के बादशाह शाहशुजा में कोहनूर हारा ले लिया था । इस हारे को ये सय्यदा अपने पास ही रखते थे ।

इनके पास सब निवा कर कोई दो लाख दम हजार सेना थी । अपने सैनिकों को युद्धविद्या सिखाने के लिए उन्होंने यूरप के बहुत से लोग नौकर रख छोड़े थे । उनमें जनरल बेनपुरा फ्रान्सीसी सबसे मुख्य थे ।

रत्नोत्तमिंह शीघ्र-शीघ्र में लौटते थे । इनकी एक फौज भी शीघ्रता के कारण नष्ट हो गई थी । इनकी आशुति से ऐसा बोर रक्त टपकता था कि युद्ध में इनके मानने कोई न टहर सकता था । भारी से भारी विजय में भी ये कभी न विषमते थे ।

इनकी राज सभा के और महामह का अर्थात् अर्थात् करने करने का कार्य करते थे ।

महाराजा रघुजीवसिंह ।

४

के पार चार दो और यह विचार कर लिया कि यमुना
को अपने राज्य को सीना बनावे । यह देख कर उस समय के
गवर्नर जनरल लार्ड मिंटो ने सर चार्ल्स मैटकाफ को उनके
पास भेजा । महाराजा ने मैटकाफ नाट्य का बड़ा आदर-
सत्कार किया और कुछ सोच समझ कर बेंगलूरों से भेज कर
लिया । सन् १८०६ ईसवी में उन्होंने सवलज के पार से
अपनी सेना लौटा ली ।

रघुजीवसिंह के पराक्रम के भागें अकृष्णानिमान के पठानों
को भी अपना तिर नाँवा करना पड़ा । इन्होंने काबुल के
बादशाह शाहशुजा से काबुल छोड़ा ले लिया था । इन छोरे
को ये सर्वदा अपने पास ही रखते थे ।

इनके पास सब निरा कर कोई दो लाख दम हजार
सेना थी । अपने सैनिकों को युद्धविद्या सिखाने के लिए
इन्होंने यूरप के बहुत से लोग नौकर रख छोटे थे । उनमें
जनरल बेंगलूर प्रोत्साहनों सबने सुन्य थे ।

रघुजीवसिंह होल-होल में छोटे थे । इनको एक आँख
भी मोड़ना क कारक नष्ट हो गई थी । इनकी आकृति से ऐसा
होता कि एक बार कि युद्ध में इनके सामने कोई न ठहर
सकता था । भागें से भागें विजय में भी ये कभी न
पड़ते थे ।

इनका राज मग के छोड़ समानत का अच्छे अच्छे कन्हा
न कर बाबा कान द समुद्र व नद नमकद न इस

दुराई के बदले भलाई ।

सबो ने ७ जून के सन्ध्या समय ५२ वर्ष की अवस्था में
लोक लिया गये ।

४३

२६—दुराई के बदले भलाई ।

एक दिन एक ठाकुर नाहब अपनी चौपाल में बैठे थे ।
ने एक भाले द्वारा यका भूया प्यारा वयर आ निकला
र ठाकुर साहिब से कहने लगा—“भूय के नारे मेरा दन
कलवा है, कुछ खाने को मिल जाय, जिससे भागे चलने का
दारा हो ।” ठाकुर ने उसे झिड़क कर कहा, “बल, यहाँ
तेरे खाने को कुछ नहीं है ।” वह उन बेचारे ने कहा, “थोड़ा
होना ही पिला दो” । ठाकुर साहिब भागे से बाहर हो गये
कहने लगे, “वू यहाँ से जायगा कि नहीं; वहाँ वेरी दूरी
होती तो वहाँ दूँ ?” यह सुन कर वह बेचारा अपना सा ऊँह
कर चुनचार चल दिया ।

थोड़े ही दिन पीछे ठाकुर नाहब शिकार को वन में
गये । वहाँ रात भूय गये और भटकते भटकते एक झोपड़ी के
स आ निकले । रात बहुत होत गी थी और उनका गाँव बहुत
दूर था । इनमें झोपड़ा के मालिक ने उनके अपने यहाँ ठिका
र । वह एक मछली से बना भा कर लाया और जो कुछ
मछली मछली के भा अपने रख दिया । वह ठाकुर नाहब
ने कुछ देर उनके सोने के लिए पयल देखा कर ऊपर से



महाराजा रामसिंह और एक बुढ़िया की कहानी । ५१

रिक्त और कोई न था । महाराजा प्यास से व्याकुल तो हो रहे थे, पहुँचते ही बुढ़िया से बोले—“माई, थोड़ा सा ठंडा पी पिला दे ।”

यह सुन कर बुढ़िया ने उठ कर जल से भरा हुआ एक टो का बर्तन ला रक्खा । उस शीतल जल को पान करके महाराजा की प्यास जाती रही । जल पीकर वे उस भोपड़ी में राम करने लगे ।

कुछ देर आराम करके महाराजा बुढ़िया से पूछने लगे—“तुम्हारे कोई है भी ? इस जंगल में तुम्हारा निर्वाह कैसे होता ?” बुढ़िया ने उत्तर में कहा—“बेटा, मेरे कोई नहीं है । एक था, परन्तु बारह वर्ष से उसका भो पता नहीं, न जाने ही चला गया । मैंने एक बार सुना था कि महाराजा रामसिंह के यहाँ एक पहाड़ी दुर्ग में रहता है ।

मेरे खाने पीने का कोई आसरा नहीं, यहाँ बैठे हुई मैं त्रियों को जल पिलाया करती हूँ । जो किसी ने कुछ दे दिया । कभी जंगल की लकड़ी या जड़ी बूटी कुछ विक गई तो मैं लम्बे पसटम अपने दिन काटती हूँ । सो अब मेरे किये कुछ भी नहीं होता । इस समय मैं ऐसे दुःख में हूँ कि परमेश्वर । करे कि शत्रु को भो ऐसा कष्ट हो । पुत्र की वियागाग्नि मुझ परलग हो जलाया करती है ।”

इतना कह कर बुढ़िया राने लगी । यह देख कर महाराजा

३२—प्रतिज्ञापालन (१)

आचार्य के और शत्रु हो सकर ने अपने अधिकार
दे कर ही जिसे वे एक राजपूतना हो बसा हुआ था। वह
होने का सौदा बाराह था। पक्षी मौर कर उनसे एक बार
राजपूतों पर भी दावा कर दिया। कुछ कुछ हुआ।

ही राजपूत अपने नृप को रहा के लिए लड़ें हो
हो राजपूत में, राजपूत शत्रु ने उनके साथ उग्र हो गये।
राजपूतों का महाराज राजा प्रतापसिंह अपने बाल-बहों को
संभर किले जगह में आ लिया।

एक राजपूत होने ने अपने लड़के न रूढ़ नहीं हो कि जो
हो राजपूतों का राजपूतों में लड़ कर, राजपूतों, कभी कभी
होने और होने के में निरुद्ध निरुद्ध कर राजपूतों पर का हलके
हीर लड़ कर कर फिर भी कर आ लिये।

राजी राजपूतों में राजपूतसिंह नाम का एक बड़ा बूढ़
ही महाराज था अपने का और राजपूत महाराजों को तरह
हो राजपूतों का फिर हो हीर राजपूतों में राजपूत नाम
का हीर हो हो हो राजपूतों का हलके उनके
नाम राजपूतों का हीर नाम का राजपूत राजपूतों का
नाम राजपूतों का हीर नाम का राजपूत राजपूतों का
नाम राजपूतों का हीर नाम का राजपूत राजपूतों का

राजपूतों का हीर नाम का राजपूत राजपूतों का

। परन्तु रघुपतिसिंह का हृदय उस समय पुत्र-दर्शन को सा से विकल हो रहा था । इसलिए वह साधियों के को सुना अनसुना करके घर की ओर चल ही दिया ।

रघुपतिसिंह जब सायंकाल के समय अपने नगर में जा तब देखा कि समस्त नगर में सन्नाटा छाया हुआ है । के द्वार पर जाते ही पहरेवालों ने टोका—“कौन ?” रघु-सिंह ने निहट्ट होकर कहा—“रघुपतिसिंह ।”

पहरेवालों ने कहा—“बादशाह की आज्ञा है कि तुम जहाँ मिलो पकड़ लिये जाओ ।”

रघुपतिसिंह ने कहा—“भाई, मेरा पुत्र बड़ा बीमार है । समय उसकी घटी घुरी लगा है । कुछ काल के लिए मुझे घर जाने दो । मैं अभी द्रव्य कर लौट आता हूँ । फिर तुम मेरे जो करना स्मरण रहे उसे मैं राजपुत्र हूँ सत्रिय-मन्त्रान् अमन्य कभी न करूँगा”

पहरेवालों विपरीत अब घर लौट कर बादशाह की आज्ञा भरी तो जान धाया था तब उस समय एक को कलना । बहुत रागी था रघुपतिराज्य के ऊपर राजा-मन्त्रियों वरकर उसका भा हृदय प्रलय हो रहा था । तब उसने एक लम्बा साँस लेकर कहा—“है, मैं अभी य आया”

जब रघुपतिसिंह भावर गया तो दूसरा एक पहरेवाला को भी “वकल हो रहा है” उसका नाम उसका पालन

जायें । परन्तु रघुपतिसिंह का हृदय उस समय पुत्र-दर्शन को लालसा से विकल हो रहा था । इसलिए वह साधियों के कहने को सुना अनसुना करके घर की ओर चल ही दिया ।

रघुपतिसिंह जब सायंकाल के समय अपने नगर में पहुँचा तब देखा कि सनत्त्व नगर में सन्नाटा छाया हुआ है ।

के द्वार पर जाते ही पहरेवाले ने टोका—“कौन ?” रघु-सिंह ने निबर होकर कहा—“रघुपतिसिंह ।”

पहरेवाले ने कहा—“बादशाह की आज्ञा है कि तुम जहाँ मिलो पकड़ लिये जाओ ।”

रघुपतिसिंह ने कहा—“भाई, मेरा पुत्र बड़ा बीमार है । समय उसको बड़े दुरी दशा है । कुछ काल के लिए मुझे वर जाने दो । मैं अभी देख कर लौट आता हूँ । फिर तुम हे जो करना । स्मरण रहे कि मैं राजपुत्र हूँ, त्रिविध-सन्तान असत्य कभी न कहूँगा ।”

पहरेवाला सिपाही जब घर छोड़ कर बादशाह की सेना भरती होने आया था तब उस समय उसका भी एकलौता । बहुत रोगी था । रघुपतिसिंह को कष्ट-रस-भरी बातें तकर उसका भी हृदय पिघल गया । अपने पुत्र की याद रके उसने एक सन्तान मान लेकर कहा—“भैया जाओ, अब आओ ।”

जब रघुपतिसिंह लेकर गया तो देखा कि वह बड़ा बीमार था । उसने कहा—“मेरा पुत्र बड़ा बीमार है । मैं उसे देख कर लौट आता हूँ । फिर तुम हे जो करना । स्मरण रहे कि मैं राजपुत्र हूँ, त्रिविध-सन्तान असत्य कभी न कहूँगा ।”

३४-प्रतिज्ञापालन (३)

इस घटना को हुए अभी कुछ ही समय बीता होगा कि गहियों का सरदार कुछ सैनिकों को साथ लेकर उधर आ कला । उसने आते ही पहरेवाले से कहा—“रघुपतिसिंह का ग समाचार बताओ ।”

न जाने रघुपतिसिंह के घर आने और फिर लौट जाने का माचार उसे कहाँ से विदित हो गया था । पहरेवाले ने भी व वृत्तान्त सब सच सुना दिया । सरदार ने रघुपतिसिंह के ङ देने के अपराध में पहरेवाले को बाँध कर कैद कर दिया र उसके द्वार पर दोहरा पहरा बैठा दिया ।

रघुपतिसिंह को यह बात ज्ञात हो गई कि मेरे छोड़ देने-ला कैद कर लिया गया है । यह सुन कर उससे न रहा गया । ह तुरन्त शत्रु के सरदार के पास आकर उपस्थित हो गया । घुपतिसिंह और उस पहरेवाले सिपाही दोनों को मारने की गद्दा हुई ।

दूसरे दिन प्रातः काल ही सिपाही और रघुपतिसिंह दोनों गध पाँव बँधे हुए सामने खड़े किय गये । उनके पास दो गद्दा नङ्गा तलवार लेकर खड़े हा गये । वे आज्ञा को बाट खे हो रहे थे कि इतने में वहाँ पर उन सिपाहियों का सेनापति आ पहुँचा ।

सेनापति ने रघुपतिसिंह का आर उगला उठा कर कहा— ‘सिपाहिया, तुम जानते हा यह कौन है ? यह रघुपतिसिंह है

अब क्षमा किया । जो मनुष्य ईश्वर से नहीं डरता वह सिपाही ही नहीं ।” इतना सुनते ही पहरेवाला सिपाही आनन्द में मग्न हो गया । हाथ पाँव बँधे होने पर भी वह बादशाह के चरणों में जा गिरा ।




फिर बादशाह ने रघुपतिसिंह की ओर आँख उठा कर कहा—“मुझे पहले इस बात का ज्ञान न था कि शूरवीर राज-पूत अपनी प्रतिज्ञापालन करने के लिए ऐसे वीर होते हैं । मैं तुम्हारे परिश्रम, शूरवीरता और प्रतिज्ञापालन से बड़ा प्रसन्न हुआ । जाओ, मैंने तुमको भी क्षमा किया । यदि अब भी तुम मेरे साथ शत्रुता करना चाहते हो तो जाओ, राणा प्रतापसिंह से जा मिलो ।”

रघुपतिसिंह बड़ी धीरता और निर्भयता से कहने लगा—“जिस रघुपतिसिंह को इतना परिश्रम करने पर भी आप न जीत सके थे, आज आपने अपने हृदय की हृदारता दिखला कर उसे जीव लिया । यद्यपि आप मेरे शत्रु हैं, तथापि आपको गुण-ग्राही जानकर मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब मैं कभी आपका शत्रु बनकर तलवार न उठाऊँगा ।”

जो मनुष्य अपने वचनों और प्रतिज्ञाओं का पालन करते हैं और सत्य पर दृढ़ता से जमे रहते हैं और दूसरों के दुःखों में सदा उनकी सहायता करते हैं, परमेश्वर सदा उन पर प्रसन्न रहता है और उनकी सहायता करता है ।

पंचभाग

१—कधीर की साखी

जो नेहूँ काटा मुझ, वादि बोद नू फूल ।
 नेहूँ कूल क फूल हैं, वाको हैं निरमूल ॥ १ ॥
 दूरवन का न मनाइये, जाकी मोटी हाथ ।
 मुई माल की स्वामि मो, मार ममम हो जाय ॥ २ ॥
 या दुनियाँ में भाइ के, छाड़ि देइ नू पैंठ ।
 खेना है सो खेइ लं, उटी जान है पैंठ ॥ ३ ॥
 ऐसी बानी बेतिये, मन का घारा सोय ।
 औरन को शोनन करे, घायी गीतन होय ॥ ४ ॥
 दया कौन पर कीजिये, का पर निर्दय होय ।
 माई के मव जोव है, कौरी कुंजर दोय ॥ ५ ॥
 जहाँ दया तई धर्म है, जहाँ अंधा तई पाप ।
 जहाँ क्रोध तई कान है, जहाँ समा तई भाव ॥ ६ ॥
 माँच बराबर नव नदी, झूठ बरोबर पाप ।
 जाके दिग्दय माँच है, ताक  भाव ॥ ७ ॥
 संगति कीजै मायु को, 
 संगति  की

काल करे सो धाज कर, धाज करे सो धव ।
 पल में परलै होयगी, बहुरि करोगे फव ॥८॥
 बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न दोखे कोय ।
 जो दिल गोजे आपना, मुभस्ता बुरा न कोय ॥१०॥

२—कबीर की साखी

जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरं पानी पैठ ।
 हाँ धारी हँदन गई, रही किनारे बँठ ॥१॥
 साहब के दरबार में, कसी काहु की नाहिँ ।
 बंदा मौज न पावही, धूक पाकरी नाहिँ ॥२॥
 साहब तुम न पिनारियो, लाग्य लोग मिल जाहिँ ।
 हमसे तुमका दण्ड है, तुमने हमका नाहिँ ॥३॥
 जाको राखे नाह्यो, मारि न नकिट कोय ।
 बार न पाँका करि सकै, जो जग धरो होय ॥४॥
 साहब सो सब होत है, बंदे मो कछु नाहिँ ।
 राई सो पवंत करे, पवंत राई नाहिँ ॥५॥
 दुख में सुनिरन मद करे, सुख में करे न कोय ।
 सुख में जो सुनिरन करे, दुख काहे का होय ॥६॥
 एकहि नाथे सब नाथे, सब नाथे सब जाय ।
 जो नू गोपे भूत के कहे कहे ॥७॥

क्षरे द्रिस्त जे काहु की, ता में लट भर दान ।
 पर विद्या की द्रिस्त घर, जासी हो जग मान ॥७॥
 प्रीति रीति दुख गूल हैं, मैं कीन्हों निरपार ।
 प्रीति भली भगवान की, जाते हो भवपार ॥८॥
 भलो न जग में त्रास कोउ, त्रास दुःख को गूल ।
 पर गुरु पितु के त्रास से, मिटे क्लेश को गूल ॥९॥
 बुरो मागिबो जगत में, जाते हो भवमान ।
 चमा मागिबो ईश ते, भली यही कर शान ॥१०॥

— —

४—श्रम और संपत्ति

[मुकुन्दलाल शास्त्री-कृत शिवाकौमुदी से]

जे जग में श्रम ते विविध, विद्याधन पित लाइ ।
 संचहिं करहिं सुजान ते, सुख पावें मन भाइ ॥१॥
 श्रम से विद्या पाइये, श्रम ही से धन होइ ।
 श्रम ही से सुख होत है, श्रमविन लहे न कोइ ॥२॥
 श्रम ही से अधिकार पुनि, लहत मनुज अधिकाय ।
 विन श्रम कारज होय नहिं, श्रम से दुःख नसाइ ॥३॥
 श्रमी पुरुष संपत्ति लहे, श्रमी सुयश भर धाम ।
 श्रम ही से या जगत में, शान लहे अभिराम ॥४॥
 श्रम करि जे विद्या पढ़े, मनुज मान तजि भाइ ।
 त सुख लहे अयास विन, संपत्ति अवसर पाइ ॥५॥

संगति हो से लोक में, अधिक होइ विरवान ।
 संगति दिन या रात में, होइ प्रवीण विमान ॥ १७ ॥
 संगति से व्यवहार सब, सब लोक पर लोक ।
 दिन संगति के होव है, राजसभा में रोक ॥ १८ ॥
 इहि कारन उत्तम पुरुष, श्रम कर जेरैं वित ।
 इह समय में बहुत सुख, भोगैं सदा सुविध ॥ १९ ॥
 अधिक ज्ञान से जो पुरुष, सब करहिं मन भाइ ।
 परहिं विरति की तानि में, पुनि पीछे पड़िवाइ ॥ २० ॥

५—विदुरनीति

[बाबू गोपालचन्द्र वनान गिरधरदास अनुवादित]
 नरनाथ नतव कुमन्त्र सों, साधु कृतंगति पाय ।
 दिनसत सुव भविष्यार सों, द्विज दिन पढ़े नसाय ॥ १ ॥
 पावक बैठे रोग शून, मनमेंहुँ राखिय नहिँ ।
 ये सोइ हैं बड़हिं पुनि, महा यत्न सो जाहिँ ॥ २ ॥
 सैन करिअ सबहुन नहों, दर नहिँ चल जमान
 तौरय नहिँ मन श्रुति मन, विद्या मन धन ज्ञान ॥ ३ ॥
 ज्ञान में पुन सब होकिबे, करिय ताहि स्वोकार
 ज्ञान ध्यान हैं करिय सो, होय मोति अनुभार ॥ ४ ॥
 सकल वस्तु समझ करै, भावै कोई दिन कान
 समय परै पर ना निहै, भावों नरचे दान ॥ ५ ॥

विदुरनीति ।

संपति हो से लोक में, अधिक होइ विश्वास ।
संपति दिन या जगत् में, होइ प्रवीण विनास ॥ १७ ॥
संपति से व्यवहार सब, सबै लोक पर लोक ।
दिन संपति के होत है, राजसभा में रोक ॥ १८ ॥
इहि कारण उचन पुरुष, श्रम कर जोरें वित्त ।
वृद्ध सनय में बहुत सुख, भोगें सदा सुचित्त ॥ १९ ॥
अधिक लाभ से जो पुरुष, खर्च करहिं मन भाइ ।
नरहिं विपति को स्वानि में, पुनि पोछे पछिवाइ ॥ २० ॥

५—विदुरनीति

[बाबू गोपालचन्द्र उपनाम गिरधरदास अनुवादित]
नरपति नस्तव कृमन्त्र सो, साधु कुसंगति पाय ।
दिननत सुत अति प्यार सो, द्विज दिन पड़े नसाय ॥ १ ॥
पावक ईरो रोग शून, मपनेहुँ राखिय नहिं ।
से छोड़े हूँ बढ़हिं पुनि, महा यत्न सो जाहिं ॥ २ ॥
लोभ सरित्त अबगुन नहो, तर नहिं चलय मनान ।
तोरय नहिं मन-शुद्धि मन, विद्या मन धन भान ॥ ३ ॥
जा में गुन अबलोकिये, करिय ताहि स्वाकार ।
बाल-बचन हूँ करिय जो, होय नोति अनुमार ॥ ४ ॥
नकल बस्तु समष्ट करै, आवै कंठ दिन कान ।
तमय परै पर ना निर्मै, नादो गगन दान ॥ ५ ॥

जानि तबै गति ईश की, करै न कहूँ पाप ।
 सहि बराबर लगत को, देखत है वह आप ॥ ॥
 सुन के दुर्जन के वचन, हो रहिये धुपचाप ।
 करै जो सनता वासु की, नाच कहावै आप ॥ ॥
 मूठ कहूँ नहि बोलिए, मूठ पाप कर मूल ।
 मूठे को कोउ जगत नै, करै प्रतीति न मूल ॥ ॥

७-रामचन्द्र का गेद खेलना

[रामचन्द्रिका से]

एक कास भवि रूप निधान
 खेलन को निकरे चौगान ।
 हाथ धनुष भवि सुन्दर रूप,
 संग लिए सब सोदर भूप ॥
 बाँधों सब असवारिन भरी,
 हय हाथिन सों सोहत खरी ।
 वर-मुँजन सों सरिता भली;
 मानों मिलन समुद्रहि बली ॥
 यहि विधि गये राम चौगान;
 सावकाश सब भूमि समान ।
 शोभत एक कोस परिमान,
 रथों रचिरे ठापर चौगान ॥



अपना दाई पन्ना की सरसता में महलों में रहता था। एक दिन जैम ही पन्ना ने उदयसिंह को खिन्ना पिन्ना कर मुलाया, वैम ही महल में कुछ राने पीटने का शब्द सुनाई दिया पन्ना ने नाई स जै उदयसिंह का जूठा उठाने आया था पूछा—“यह कौन गाँता है ?” नाई ने घबरा कर कहा—“राना बनवीर ने विक्रमाजीत को मार डाला ।”

इतना सुनते ही पन्ना घर घर काँपने लगी। वह मान लगी कि बनवीर ने जब विक्रमाजीत को मार डाला, तब उदयसिंह को कब जीता छोड़ सकता है ? उदयसिंह के जीवित रहने पर मदा उसे बड़ी शंका बनी रहेगी कि बड़ा होकर कहीं वह उससे राज न छीन ले ।

हृदय में अनोखी स्वामिभक्ति विराजमान थी । इसलिए अपने व के मरने का वसे कुछ भी शोक न हुआ । पन्ना वसी समय दरसिंह को टोकरी में छिपा कर नार्ई को साथ लेकर चित्तौर निकल खड़े हुए । वे दोनों कमलनौर के ठाकुर के पास जा पहुँचे । वमने बदरसिंह को बहुत आराम से रक्खा । वही दरसिंह बड़ा होने पर चित्तौर का राजा हुआ ।

४-भले घुरे की पहचान

जिस परमेश्वर ने हम सबको पैदा किया है और हमारे लिए तरह तरह के पदार्थ संसार में पैदा किये हैं वह यही चाहता है कि सभी मनुष्य धर्मात्मा, सज्जन और परोपकारी हों । जिन प्रकार माता-पिता अपने पुत्र से सदा प्रसन्न रहते हैं और हम पर बड़ी दया दिखलाया करते हैं, इसी प्रकार परमात्मा भी धर्मात्मा, सज्जन और परोपकारी मनुष्यों से सदा प्रसन्न रहता है और हमको सदा सहायता किया करता है ।

परमेश्वर ने हमारे हृदय में एक ऐसी शक्ति दी है कि जब हम कोई काम करते हैं तब वह दुरुन्त बदला देती है कि यह काम धर्म है या अधर्म, अच्छा है या बुरा । जब हम कोई ऐसा काम कर सकते हैं कि जो हमें करना अनुचित था तब हम सोचें बहुत परतपन्ना करते हैं । हम समय हमारे हृदय में एक प्रकार का दया दान करता है । इसका कारण यह है कि वह शक्ति

पटना) पहुँचे । वहाँ राजा विम्बसार इनसे मिलने आये और हुत सा धन भेंट करने लगे परन्तु इन्होंने कहा—“मुझे धन तो इच्छा नहीं । मैंने भगवान् के लिए सब घर-बार छोड़ दिया है ।”

बुद्धजी ने गया में जाकर वहाँ के प्रसिद्ध विद्वानों से छहों लाख पढ़े । इससे भी जब इनको पूरी शान्ति न मिली तब ये गाँव शिष्यों को साथ लेकर जङ्गल में चले और वहाँ खाना पीना छोड़ कर भगवद्भजन में मग्न रहने लगे । परन्तु शान्ति फिर भी न मिली । उस समय इनको ज्ञान हो गया कि शरीर की शक्ति घटने से बुद्धि की शक्ति भी कम हो जाती है । बुद्धजी की इस प्रकार की स्थिर वृत्ति देख कर शिष्यों ने उनका साथ छोड़ दिया ।

एक दिन एक पीपल के नीचे बैठ कर बुद्धजी ने यह निश्चय कर लिया कि अब मुझे क्या करना चाहिए । उसी दिन से उन्होंने बुद्ध पदवी पाई ।

सबसे पहले कार्शी पहुँच कर सारनाथ के पास ये लांगों को समझाने लगे कि सब जीवों पर दया करो ।

कुछ दिन के बाद राजगढ़ के राजा विम्बमार इनके मत में आ गये । परन्तु इस पर इनके पुत्र ने रुष्ट होकर इन्हें मार डाला । परन्तु बुद्धजी जब फिर भ्रमण करने हुए राजगढ़ गये तो वह स्वयं भी उनका चेला हो गया ।

इसी प्रकार बुद्ध जी लागा कर अपने धर्म की बातें सिखाने

रहे । महर्षों मनुष्य उनके चेलों हो गये । आज-कल संसार
जितने बौद्धमतानुयायी हैं वतने भीर किसी मव के
नहीं हैं । दो सदस्र वर्ष पूर्व हमारे देश में उनका मव बहुत
फैला हुआ था । अब भी चीन, जापान, म्यान्मार्, स्याम और
हमारे दूसरे देशों में यह मन अधिकता से पाया जाता है ।

मृत्यु है संसार में सब प्राणियों पर दया करना ही उचित
है । अस्सी वर्ष की आयु में सुद्धजी ने इस लोक को छोड़
निर्वाण प्राप्त किया ।

—

६—कोई काम बिना सोचे समझे न करना चाहिए

एक बाइगाह को शिकार भेजने का बड़ा अभ्यन्त था ।
उमने एक बाइ पास रक्खा था । वह उसे बड़ा चाहता था ।
एक दिन वह बाइ को साथ लेकर शिकार को चला । जंगल में
घुँस कर एक दिन के पीछे चगने पोंका बाइ दिया । बहुत
दूर तक घेँका मगा, परन्तु दिन हाथ ल गया । निशान का
बक कर बैठ गया और जंगल में व्याकुल और पीड़ित होकर
हवा चढ़ा जल की खोज करने लगा । खोजता खोजता एक
बहाह के नीचे आ पहुँचा ।

दम पर्यन्त में बूँद बूँद बरसने लगा निरर्थक जब टपक
रहा था । उसे देख कर बाइगाह में एक बहाना निकाल कर

कोई काम बिना सोचे समझे न करना चाहिए । २५

जल के नीचे रख दिया । जब कटोरा भर गया धीरे-धीरे दादशाह ने पीना चाहा तभी बाज़ ने पर मार कर उसे गिरा दिया । दादशाह ने फिर कटोरा पानी से भरा धीरे-धीरे पीना ही चाहा था कि बाज़ ने फिर पर मार कर गिरा दिया । दादशाह प्यास से बड़ा व्याकुल था । उसने क्रोध में भर कर बाज़ को पृथ्वी पर पटक दिया । बाज़ पृथ्वी पर गिरते ही मर गया ।

रत्न ने दादशाह का एक नौकर, जो पीछे रह गया था, को बुलाया । उसने धाकर देखा कि बाज़ मरा पड़ा है धीरे-धीरे दादशाह प्यास से व्याकुल हो रहा है । नौकर ने निराला निकाल कर अपनी सुराही में से पानी भर कर दादशाह के सामने किया । दादशाह ने कहा—“जो निराला मरने में सँतक रहा है ऊपर जाकर उनका पानी भर लाओ ।”

नौकर पहाड़ पर गया, तो क्या देखा कि घाटी में से घोंडा घोंडा पानी निकल रहा है । पर एक मरा हुआ बिल्लू मरा पड़ा है । उसका मुँह खुला है । निराला मर चुका है वह पानी में निकल रहा है । दादशाह को पता चला कि वह मर चुका है ।

यह देख कर नौकर ने दादशाह के पास जाकर कहा कि नौकर ने देखा कि दादशाह को सुराही का पानी जल के नीचे रख दिया । दादशाह ने कहा कि बाज़ ने मारा है । दादशाह ने कहा कि बाज़ ने मारा है ।

विद्यया विमुक्तये कां तो भरपूर शिक्षा देते हैं पर
 १. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८. ९. १०. ११. १२. १३. १४. १५. १६. १७. १८. १९. २०. २१. २२. २३. २४. २५. २६. २७. २८. २९. ३०. ३१. ३२. ३३. ३४. ३५. ३६. ३७. ३८. ३९. ४०. ४१. ४२. ४३. ४४. ४५. ४६. ४७. ४८. ४९. ५०. ५१. ५२. ५३. ५४. ५५. ५६. ५७. ५८. ५९. ६०. ६१. ६२. ६३. ६४. ६५. ६६. ६७. ६८. ६९. ७०. ७१. ७२. ७३. ७४. ७५. ७६. ७७. ७८. ७९. ८०. ८१. ८२. ८३. ८४. ८५. ८६. ८७. ८८. ८९. ९०. ९१. ९२. ९३. ९४. ९५. ९६. ९७. ९८. ९९. १००.

१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८. ९. १०. ११. १२. १३. १४. १५. १६. १७. १८. १९. २०. २१. २२. २३. २४. २५. २६. २७. २८. २९. ३०. ३१. ३२. ३३. ३४. ३५. ३६. ३७. ३८. ३९. ४०. ४१. ४२. ४३. ४४. ४५. ४६. ४७. ४८. ४९. ५०. ५१. ५२. ५३. ५४. ५५. ५६. ५७. ५८. ५९. ६०. ६१. ६२. ६३. ६४. ६५. ६६. ६७. ६८. ६९. ७०. ७१. ७२. ७३. ७४. ७५. ७६. ७७. ७८. ७९. ८०. ८१. ८२. ८३. ८४. ८५. ८६. ८७. ८८. ८९. ९०. ९१. ९२. ९३. ९४. ९५. ९६. ९७. ९८. ९९. १००.

१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८. ९. १०. ११. १२. १३. १४. १५. १६. १७. १८. १९. २०. २१. २२. २३. २४. २५. २६. २७. २८. २९. ३०. ३१. ३२. ३३. ३४. ३५. ३६. ३७. ३८. ३९. ४०. ४१. ४२. ४३. ४४. ४५. ४६. ४७. ४८. ४९. ५०. ५१. ५२. ५३. ५४. ५५. ५६. ५७. ५८. ५९. ६०. ६१. ६२. ६३. ६४. ६५. ६६. ६७. ६८. ६९. ७०. ७१. ७२. ७३. ७४. ७५. ७६. ७७. ७८. ७९. ८०. ८१. ८२. ८३. ८४. ८५. ८६. ८७. ८८. ८९. ९०. ९१. ९२. ९३. ९४. ९५. ९६. ९७. ९८. ९९. १००.

मनन के नष्ट होने का अनुशासन उनके हृदय को स्पर्श तक नहीं
 पाता। जीवन के नाश युद्ध करने के लिए सुमज्जित युवक
 इन विभिन्न नियमों को अवलम्बन करके समय के सद-
 धारण करने पर सफलमनोरथ हो सकते हैं, इस विषय में
 एक बार-बार नद्वाराने नीचे लिखी प्रणाली के अनुसार
 काम करने की आज्ञा दी है—

- (१) द्यूत में कामों को एक साथ करने का सद्यः उपाय
 है कि एक बार एक ही काम को करो।
- (२) जो काम तुरन्त पूरा करने योग्य है उसे उसी समय
 ही करो।
- (३) जिस काम की आज्ञा करना है उसे कल के लिए
 न छोड़ रखो।
- (४) जो काम कराने जिसे होता हो, उसे दूसरे के भारों
 में न डालो।
- (५) व्यवहार में जिसकी जरूरी काम पूरा किया चाहते,
 करना ही चाहते, विचार्य लेना।
- (६) यदि कोई काम पूरा किया चाहते हो तो उसे तुरन्त
 ही करो।
- (७) यदि कोई काम है जो तुरन्त करना चाहते हो तो उसे
 तुरन्त ही करो।
- (८) यदि कोई काम है जो तुरन्त करना चाहते हो तो उसे
 तुरन्त ही करो।
- (९) यदि कोई काम है जो तुरन्त करना चाहते हो तो उसे
 तुरन्त ही करो।
- (१०) यदि कोई काम है जो तुरन्त करना चाहते हो तो उसे
 तुरन्त ही करो।

पद्यभाग

१—वृन्दविनोद सतसई

मान होत है गुनन ते, गुन विन मान न होय ।
 शुक सारी राखै सबै, काग न राखै कोय ॥१॥
 हुं लगत सित्त के वचन, हिये विचारो आप ।
 कड़वा भेषज विन पिये, मिटे न तन को ताप ॥२॥
 रहे समीप बड़ेन के, होत पड़ो हित नेल ।
 सबही जानत बढ़त है, वृत्त परावर बेल ॥३॥
 हितहू को कहिये न तिहि, जो नर होय अपोष ।
 क्यों नकटे को भारसी, होत दिखाये कोष ॥४॥
 मोछे नर को प्रीति को, दोन्हीं रीति बताय ।
 जैसे छोड़त ताल जल, पटत पटत घट जाय ॥५॥
 जिहि प्रसंग दूष्य लगै, तजिये ताको नाय ॥६॥
 मदिरा मानत है जनत दूष्य कपाली दाह ॥७॥
 जक संग दूष्य दुः करि विहि पहिचानि
 जैसे मान दूष्य नर मर पड़ोये पानि ॥८॥
 कहे ॥९॥ दुष्य परे केने पावे कं
 ॥१०॥ ॥११॥ ॥१२॥ ॥१३॥ ॥१४॥ ॥१५॥

हिमन" वे नर मर चुके, जे कहें मांगन जाहिं ।
 ते पहिले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहिं ॥८॥
 नय दशा कुल देख के, सयै करत सम्मान ।
 हिमन" दीन अनाथ को, तुम पिन को भगवान ॥९॥

३—रहीम के दोहे

हिमन" चुप हूँ बैठिए, देखि दिनन को फेर ।
 । नोकै दिन आय हूँ, घनत न लगिहै घेर ॥१॥
 हिमन" नीचन संग घसि, लगत कलंक न काहि १
 । कलारिज हाथ लखि, मद समझहि सब ताहि ॥२॥
 हिमन" निज मन की विधा, मनही राखी गोय ।
 ते अठिहैहै लोग सय, घाँटि न लैहै कोय ॥३॥
 गरी बात बनै नहीं, लाख करी किन कोय ।
 हिमन" बिगरे दूध को, मघे न माखन होय ॥४॥
 हिमन" अती न कीजिए, गहि रहिए निज कानि ।
 हिजन अति फूँजै तऊ, डार पात को हानि ॥५॥
 हिमन" दूध बदन का नय न दूध के दुग्ध
 हा कम आये लूँ अऊ के नयन
 । बदन का नय नय नय नय नय नय
 । नय नय नय नय नय नय नय नय

विन कर संग सदा दुखदाई ।

जिमि कपिलहि घालै हरदाई ॥

खलन हृदय अति ताप विशेषी ।

जरहिं सदा पर-संपाति देखी ॥

जहँ कहूँ निन्दा सुनहिं पराई ।

हर्षहिं मनहुँ परो निधि पाई ॥

वैर अकारन सब काहू सो ।

जो करु हित अनहित ताहू सो ॥ २

भूठ लेना भूठ देना ।

भूठ भोजन भूठ चबेना ॥

बोलाईहि मधुर वचन जिमि नारा ।

खायँ नहा अति हृदय कठो ॥

लोभे ओढ़न लोभे हासन ।

परमोदर पर यमपुर आसन ॥

काहू को जो सुनहिं बडाई ।

खाम लेहै मनु बूढ़ भाई ॥

जब कहूँ का हसै विरक्त

सुख हसै मानै जगन्मन ॥

माँह पाने पुरु विष न जानै

पानु पाने पुरु पानै जानै ॥

विद्या विनय निपुण गुण शीला ।

खेलेंहि खेल सकल नृपलीला ॥

करतल धाय धनुष अति सोहा ।

देखत रूप चराचर मोहा ॥

पन्धु सखा सब लेंहि बुलाई ।

वन मृगया नित खेलहिं जाई ॥

पावन मृग मारहिं जिय जानो ।

प्रतिदिन नृपहि दिखावहिं आनी ॥

अनुज सखा संग भोजन करहीं ।

मातु पिता आशा अनुसरहीं ॥

जेहि विधि सुखी होहिं पुरलोग ।

करहिं कृपानिधि सोइ संयोग ॥

प्रातकाल उठि के रघुनाथा ।

मातु पिता गुरु नाबहिं भाया ॥

आयसु मांगि करहिं पुरकाजा ।

देसि चरित हरबहिं नन राजा ॥

कोशल पुरबासी नर, मारिष्टुन्द अरु बाह्य ।

मादहु ते प्रिय लागहीं, सब कहें राम वृपाल ॥

मारीच-वध ।

७-मारीच-वध

(रानायट से)

हेहि वन निकट दशानन गयऊ ।

तब मारीच कपट मृग भयऊ ॥

अति विचित्र कह्यु धरनि न जाई ।

कनक-देह नटि रचित बनाई ॥

सोता परन रुचिर मृग देखा ।

झंग झंग सुमनाहर बेपा ॥

सुनहु देव रघुवीर कृपाला ।

यहि मृग कर अति सुन्दर छाहा ॥

सत्यसथ प्रभु वध कर एही ।

आनहु चर्म कहा वैदही ॥

मृग विना कि कउ परक बंधी ।

करन कउ बंधु कउ बंधु नहि ॥

कउ बंधु कउ बंधु कउ बंधु ॥

कउ बंधु कउ बंधु कउ बंधु ॥

कउ बंधु कउ बंधु कउ बंधु ॥

कउ बंधु कउ बंधु कउ बंधु ॥

कउ बंधु कउ बंधु कउ बंधु ॥

कउ बंधु कउ बंधु कउ बंधु ॥

नृपहिं वचन त्रिय नहिं त्रिय प्राना ।

करहु दात पितु-वचन प्रमाना ॥

करहु साँत धरि भूप रजाई ।

हैं तुन कहैं सब भाँति भलाई ॥

परशुराम पितु-आज्ञा राखी ।

नारी नातु लोक सब साखी ॥

वनय यथाविधि यौवन दयऊ ।

पितु आज्ञा अथ अपरा न भयऊ ॥

अनुचित उचित विचार तटि, जो पालहिं पितु दैन ।

वे मानन सुख सुपरा के, बसहिं अनुरपविसेन ॥

अवशि नरेश वचन फुर करहु ।

पालहु प्रजा शोक परिहरहु ॥

सुरपुर नृप पाइहि परिवेष्ट ।

तुन कहैं सुख सुपरा नहिं दोष्ट ॥

वेद विदित सम्मत सबही का ।

जेहिं पितु देखे सो पावे दोका ॥

करहु राज परिहरहु गलाना ।

नातहुं मोर वचन दित जाना ॥

सुने मुख जब राम बैसै

अनुचित कहै न कहै न

नृपहिं वचन प्रिय नहिं प्रिय प्राना ।

करहु तात पितु-वचन प्रमाना ॥

करहु सोत धरि भूप रजाई ।

हैं तुन कहैं सब भांति भलाई ॥

परशुराम पितु-भ्राता राखी ।

मारो मातु लोक सब साखी ॥

वनप ययातिहि यौवन दयऊ ।

पितु भ्राता अप अयश न भयऊ ॥

मनुचित उचित विचार तजि, जो पालहिं पितु बैन ।

उं भाजन सुख सुयश के, बलहिं अनरपति-येन ॥

अवशि नरेश बचन पूर करहु ।

पालहु प्रजा शोक परिहरहु ॥

सुरपुत्र नृप पाइहि परिदोष ।

तुन कहैं सुदृढ सुयश नहिं दोष ॥

वेद विदित नमन सबही का ।

वेदि पितु देह सो पावे होका ॥

करहु सब नरेश बचन पूर करहु ।

पालहु प्रजा शोक परिहरहु ॥

सुरपुत्र नृप पाइहि परिदोष ।

तुन कहैं सुदृढ सुयश नहिं दोष ॥

नृपहिँ वचन प्रिय नहिँ प्रिय प्राना ।

करहु ताव पितु-वचन प्रमाना ॥

करहु सोस धरि भूप रजाई ।

है तुम कहैं सब भाँति भलाई ॥

परशुराम पितु-आज्ञा राखी ।

मारी मातु लोक सब साखी ॥

तनय ययातिहि यौवन दयऊ ।

पितु आज्ञा अघ अयश न भयऊ ॥

अनुचित उचित विचार तजि, जो पालहिँ पितु धैन ।

भाजन सुख सुयश के, बसहिँ अमरपति-ऐन ॥

अवशि नरेश वचन कुर करहु ।

पालहु प्रजा शोक परिहरहु ॥

सुरपुर नृप पाइहिँ परितोषू ।

तुम कहैं सुकृत सुयश नहिँ दोषू ॥

वेद विदित सम्मत सबही का ।

जहिँ पितु देइ सो पावे टोका ॥

करत न न परिहरतु गलाना

मानहुँ मेरे वचन जित जना ॥

तनय नरेश अमर राम वैदना

अनुचर कहैं न न भय न का

पितु सुरपुर सिपरान वन, करन कहहु मोहिँ राज ।
यहि वे जानहु मोर हिव, कै आपन बड़ काज ॥

दिव हमार सिपरति सेवकाई ।

तो हरि लोन भातु कुटिलाई ॥

मैं अनुमान दोख मन माहो ।

आन बपाय मोर दिव नाहो ॥

शोक समाज राज केहि लेखे ।

लखन-रान सिपरद दिनु देखे ॥

जाते राम पहुँ आपनु देह ।

एकादि भंक मोर दिव पेहू ॥

मोहि समान को पान निवालो ।

जेहि लुगि सोप-रान बनवालो ॥

राय राम कहैं कानन दोन्हा ।

बिहुरत गनन अनरपुर कोन्हा ॥

मैं शठ नव अनरथ कर देखू ।

बैठि बाउ नव सुनवै मखेनू ॥

प्रेम मनुष्य के प्रियकर सब नू

जो नर नारी लो करन नू

... करन कहवै नरक

... नर नारी कहैं नरक



